इकाई तीन

© NCERT not to be republished

शिक्षकों के लिए

इन अध्यायों के ज़रिए विद्यार्थियों को न्यायपालिका से परिचित कराया जा रहा है। इस व्यवस्था के पुलिस, अदालत जैसे कुछ आयामों के बारे में बच्चे पहले से ही काफ़ी कुछ जानते होंगे। वे मीडिया के ज़रिए या अपने निजी अनुभवों के आधार पर इन संस्थाओं के बारे में जानते हैं। इस इकाई में मुख्य प्रयास यह है कि न्याय व्यवस्था की बुनियादी जानकारी और आपराधिक न्याय व्यवस्था से संबंधित उपयोगी जानकारियों को जोड़ा जाए। अध्याय 5 में जो मुद्दे उठाए गए हैं उन पर अगली कक्षाओं में भी बल दिया जाएगा। इन अध्यायों को पढ़ाते हुए विद्यार्थियों को इस बात का एहसास कराएँ कि संविधान के सिद्धांतों को कायम रखने में न्यायपालिका कितनी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। अध्याय 6 में आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों की भूमिका बताई गई है ताकि विद्यार्थी हर व्यक्ति की भूमिका और न्याय के विचार को समझ सकें।

अध्याय 5 शुरू करने से पहले पिछली इकाई में हुई 'कानून के शासन' की चर्चा को दोहरा लेना अच्छा रहेगा। इसके बाद ही कानून के शासन को कायम रखने में न्यायपालिका की भूमिका पर चर्चा शुरू की जा सकती है। अध्याय 5 में न्यायपालिका से संबंधित पाँच अलग-अलग, लेकिन एक-दूसरे से जुड़ी अवधारणाओं पर चर्चा की गई है। न्यायपालिका की स्वतंत्रता उसकी ज़िम्मेदारियों के निर्वाह के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। यह काफ़ी जटिल विचार है, लेकिन बच्चों को इसे समझना पड़ेगा। इसे बुनियादी स्तर पर ऐसी निर्णय प्रक्रियाओं के उदाहरणों से समझाया जा सकता है जिनसे विद्यार्थी परिचित हैं। इसकी संरचना को एक मामले के ज़रिए दिखाया गया है। विद्यार्थियों को इस बात के लिए प्रोत्साहित किया जाए कि वे न्यायिक प्रक्रिया की कार्यपद्धति को समझने के लिए कुछ अन्य मामलों पर भी चर्चा करें। 'न्याय तक पहुँच' शीर्षक इस अध्याय की अंतिम अवधारणा में जनहित याचिका (पी.आई.एल.) की भूमिका पर ज़ोर दिया गया है। इस हिस्से में न्याय मिलने में 'विलंब' का भी ज़िक्र किया गया है। इस भाग की चर्चा करते हुए मौलिक अधिकारों के बारे में बच्चों की बढ़ती समझदारी का इस्तेमाल करें।

अध्याय 6 के ज़रिए बच्चों को आपराधिक न्याय व्यवस्था से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों की भूमिका तथा निष्पक्ष मुकदमे की प्रक्रिया से परिचित कराया जाएगा। इस अध्याय की शुरुआत एक चित्रकथा-पट्ट से होती है जिसमें चोरी की एक घटना का वर्णन किया गया है। इस कहानी के माध्यम से पुलिस, सरकारी वकील, न्यायाधीश की भूमिका तथा निष्पक्ष मुकदमे के बारे में चर्चा की गई है। इस बात की काफ़ी संभावना है कि इन चीज़ों के बारे में विद्यार्थियों की अपनी एक राय हो। हो सकता है कि वे आपराधिक न्याय व्यवस्था के बारे में काफ़ी नकारात्मक या निराशापूर्ण राय रखते हों। शिक्षक के नाते आपकी ज़िम्मेदारी यह है कि इस अध्याय में दिए गए आदर्शों की चर्चा के ज़रिए उनकी इस निराशा को दूर करें। इसके लिए दो तरीके अपनाए जा सकते हैं : एक तो आप इस बात पर ज़ोर दे सकते हैं कि आदर्श कार्यपद्धति क्या है और भारतीय संविधान में दिए गए सिद्धातों के साथ उनका क्या संबंध है। दूसरा तरीका यह है कि इन संस्थानों के कामकाज में सचेत और जागरूक जनता के योगदान को दोहराया जाए।

© NCERT not to be republished

अध्याय 5

न्यायपालिका

अखबार पर नज़र डालते ही आपको देश भर की अदालतों द्वारा किए जा रहे कामों की झलक मिलने लगती है। लेकिन क्या आप बता सकते हैं कि हमें इन अदालतों की ज़रूरत क्यों पड़ती है? जैसा कि आप इकाई 2 में पढ़ चुके हैं, हमारे देश में कानून का शासन चलता है। इसका मतलब यह है कि सभी कानून सभी लोगों पर समान रूप से लागू होते हैं और जब किसी कानून का उल्लंघन किया जाता है तो एक निश्चित प्रक्रिया अपनाई जाती है। कानून के शासन को लागू करने के लिए हमारे पास एक न्याय व्यवस्था है। इस व्यवस्था में बहुत सारी अदालतें हैं जहाँ नागरिक न्याय के लिए जा सकते हैं। सरकार का अंग होने के नाते न्यायपालिका भी भारतीय लोकतंत्र की व्यवस्था बनाए रखने में अहम भूमिका निभाती है। यह इस भूमिका को केवल इसलिए निभा पाती है क्योंकि यह स्वतंत्र है। 'स्वतंत्र न्यायपालिका' का क्या मतलब होता है? क्या आपके आसपास की अदालत और नई दिल्ली में स्थित सर्वोच्च न्यायालय के बीच कोई संबंध है? इस अध्याय में आपको इन सवालों के जवाब मिलेंगे।

© NCERT not to be republished

न्यायपालिका की क्या भूमिका है?

अदालतें बहुत सारे मुद्दों पर फ़ैसले सुनाती हैं। वे यह तय कर सकती हैं कि शिक्षकों को विद्यार्थियों की पिटाई नहीं करनी चाहिए; वे राज्यों के बीच नदियों के पानी के बँटवारे पर फ़ैसला दे सकती हैं; वे किसी अपराध के लिए लोगों को सज़ा दे सकती हैं। न्यायपालिका के कामों को मोटे तौर पर निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है–

विवादों का निपटारा– न्यायिक व्यवस्था नागरिकों, नागरिक व सरकार, दो राज्य सरकारों और केंद्र व राज्य सरकारों के बीच पैदा होने वाले विवादों को हल करने की क्रियाविधि मुहैया कराती है।

न्यायिक समीक्षा– संविधान की व्याख्या का अधिकार मुख्य रूप से न्यायपालिका के पास ही होता है। इस नाते यदि न्यायपालिका को ऐसा लगता है कि संसद द्वारा पारित किया गया कोई कानून संविधान के आधारभूत ढाँचे का उल्लंघन करता है तो वह उस कानून को रद्द कर सकती है। इसे न्यायिक समीक्षा कहा जाता है।

कानून की रक्षा और मौलिक अधिकारों का क्रियान्वयन– अगर देश के किसी भी नागरिक को ऐसा लगता है कि उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हुआ है तो वह सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय में जा सकता है। उदाहरण के लिए, कक्षा 7 की किताब में आपने हाकिम शेख के बारे में पढ़ा था जो खेतिहर थे। वे चलती हुई ट्रेन से गिरकर घायल हो गए थे। जब कई अस्पतालों ने उनका इलाज करने से इनकार कर दिया तो उनकी हालत काफ़ी खराब हो गई थी। इसी मामले की सुनवाई के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने यह फ़ैसला दिया था कि संविधान के अनुच्छेद 21 में प्रत्येक नागरिक को जीवन का मौलिक अधिकार दिया गया है और इसमें स्वास्थ्य का अधिकार भी शामिल है। फलस्वरूप न्यायालय ने पश्चिम बंगाल सरकार को आदेश दिया कि वह अस्पतालों की लापरवाही के कारण हाकिम शेख को जो नुकसान हुआ है उसका मुआवज़ा दे। सरकार को यह आदेश भी दिया गया कि वह प्राथमिक स्वास्थ्य व्यवस्था की रूपरेखा तैयार करे और उसमें आपात स्थितियों में रोगियों के इलाज पर विशेष ध्यान दिया जाए *(पश्चिम बंग खेत मज़दूर समिति बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (1996)।*

यह भारत का सर्वोच्च न्यायालय है। इसकी स्थापना 26 जनवरी 1950 को की गई थी। उसी दिन हमारा देश गणतंत्र बना था। अपने पूर्ववर्ती फेडरल कोर्ट ऑफ़ इंडिया (1937–49) की भाँति यह न्यायालय भी पहले संसद भवन के भीतर चेंबर ऑफ़ प्रिंसेज में हुआ करता था। इसे 1958 में इस इमारत में स्थानांतरित किया गया।

© NCERT not to be republished

अपनी शिक्षिका की सहायता से इस तालिका में दिए गए खाली स्थानों को भरिए–

विवाद की किस्म	उदाहरण
केंद्र और राज्य के बीच विवाद	
दो राज्यों के बीच विवाद	
दो नागरिकों के बीच विवाद	
ऐसे कानून जो संविधान का उल्लंघन करते हैं	

स्वतंत्र न्यायपालिका क्या होती है?

कल्पना कीजिए कि एक ताकतवर नेता ने आपके परिवार की ज़मीन पर कब्ज़ा कर लिया है। आप एक ऐसी व्यवस्था में रहते हैं जहाँ नेता किसी न्यायाधीश को उसके पद से हटा सकते हैं या उसका तबादला कर सकते हैं। जब आप इस मामले को अदालत में ले जाते हैं तो न्यायाधीश भी नेता की हिमायत करता दिखाई देता है।

नेताओं का न्यायाधीश पर जो नियंत्रण रहता है उसकी वज़ह से न्यायाधीश स्वतंत्र रूप से फ़ैसले नहीं ले पाते। स्वतंत्रता का यह अभाव न्यायाधीश को इस बात के लिए मजबूर कर देगा कि वह हमेशा नेता के ही पक्ष में फ़ैसला सुनाए। हम ऐसे बहुत सारे किस्से जानते हैं जहाँ अमीर और ताकतवर लोगों ने न्यायिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयास किया है। लेकिन भारतीय संविधान इस तरह की दखलअंदाज़ी को स्वीकार नहीं करता। इसीलिए हमारे संविधान में न्यायपालिका को पूरी तरह स्वतंत्र रखा गया है।

क्या आपको ऐसा लगता है कि इस तरह की न्यायिक व्यवस्था में एक आम नागरिक भी किसी नेता के खिलाफ़ मुकदमा जीत सकता है? अगर नहीं तो क्यों?

इस स्वतंत्रता का एक पहलू है 'शक्तियों का बँटवारा'। जैसा कि आपने पहले अध्याय में पढ़ा था, यह हमारे संविधान का एक बुनियादी पहलू है। इसका मतलब यह है कि विधायिका और कार्यपालिका जैसी सरकार की अन्य शाखाएँ न्यायपालिका के काम में दखल नहीं दे सकतीं। अदालतें सरकार के अधीन नहीं हैं। न ही वे सरकार की ओर से काम करती हैं।

शक्तियों के इस बँटवारे को दुरुस्त रखने के लिए यह भी महत्त्वपूर्ण है कि उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय के सभी न्यायाधीशों की नियुक्ति में सरकार की अन्य शाखाओं का कोई दखल न हो। इसीलिए एक बार नियुक्त हो जाने के बाद किसी न्यायाधीश को हटाना बहुत मुश्किल होता है।

© NCERT not to be republished

2015-16

न्यायपालिका की यह स्वतंत्रता अदालतों को भारी ताकत देती है। इसके आधार पर वे विधायिका और कार्यपालिका द्वारा शक्तियों के दुरुपयोग को रोक सकती हैं। न्यायपालिका देश के नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा में भी अहम भूमिका निभाती है क्योंकि अगर किसी को लगता है कि उसके अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है तो वह अदालत में जा सकता है।

दो वज़ह बताइए कि लोकतंत्र के लिए स्वतंत्र न्यायपालिका अनिवार्य क्यों होती है?

भारत में अदालतों की संरचना कैसी है?

हमारे देश में तीन अलग-अलग स्तर पर अदालतें होती हैं। निचले स्तर पर बहुत सारी अदालतें होती हैं। सबसे ऊपरी स्तर पर केवल एक अदालत है। जिन अदालतों से लोगों का सबसे ज़्यादा ताल्लुक होता है, उन्हें अधीनस्थ न्यायालय या जिला अदालत कहा जाता है। ये अदालतें आमतौर पर ज़िले या तहसील के स्तर पर या किसी शहर में होती हैं। ये बहुत तरह के मामलों की सुनवाई करती हैं। प्रत्येक राज्य ज़िलों में बँटा होता है और हर ज़िले में एक ज़िला न्यायधीश होता है। प्रत्येक राज्य का एक उच्च न्यायालय होता है। यह अपने राज्य की सबसे ऊँची अदालत होती है। उच्च न्यायालयों से ऊपर सर्वोच्च न्यायालय होता है। यह देश की सबसे बड़ी अदालत है जो नयी दिल्ली में स्थित है। देश के मुख्य न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय के मुखिया होते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले देश के बाकी सारी अदालतों को मानने होते हैं।

निचली अदालत से ऊपरी अदालत तक हमारी न्यायपालिका की संरचना एक पिरामिड जैसी लगती है। ऊपर दिए गए विवरण को पढ़ने के बाद नीचे दिए गए चित्र को भरें।

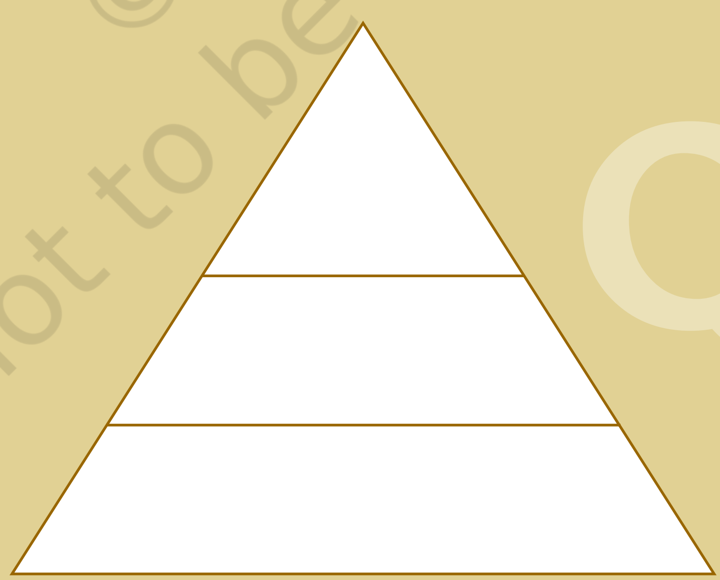

© NCERT not to be republished

उच्च न्यायालयों की स्थापना सबसे पहले 1862 में कलकत्ता, बंबई और मद्रास में की गई ये तीनों प्रेसिडेंसी शहर थे। दिल्ली उच्च न्यायालय का गठन 1966 में हुआ। आज देश भर में 24 उच्च न्यायालय हैं। बहुत सारे राज्यों के अपने उच्च न्यायालय हैं जबकि पंजाब और हरियाणा का एक साझा उच्च न्यायालय चंडीगढ़ में है। दूसरी तरफ चार पूर्वोत्तर राज्यों असम, नागालैंड, मिजोरम और अरुणाचल प्रदेश के लिए गुवाहाटी में एक ही उच्च न्यायालय रखा गया है। आंध्र प्रदेश और तेलंगाणा का एक साझा उच्च न्यायालय हैदराबाद में है। ज़्यादा से ज़्यादा लोगों के नज़दीक पहुँचने के लिए कुछ उच्च न्यायालयों की राज्य के अन्य हिस्सों में शाखाएँ भी हैं।

मद्रास उच्च न्यायालय

क्या विभिन्न स्तरों की ये अदालतें एक-दूसरे से जुड़ी हुई हैं? जी हाँ। भारत में हमारे पास एकीकृत न्यायिक व्यवस्था है। इसका मतलब यह है कि ऊपरी अदालतों के फ़ैसले नीचे की सारी अदालतों को मानने होते हैं। इस एकीकरण को समझने के लिए अपील की व्यवस्था को देखा जा सकता है। अगर किसी व्यक्ति को ऐसा लगता है कि निचली अदालत द्वारा दिया गया फ़ैसला सही नहीं है, तो वह उससे ऊपर की अदालत में अपील कर सकता है।

पटना उच्च न्यायालय

अपील की व्यवस्था को समझने के लिए आइए एक मुकदमे पर विचार करें। यह राज्य (दिल्ली प्रशासन) बनाम लक्ष्मण कुमार एवं अन्य का मुकदमा है जो निचली अदालत से सर्वोच्च न्यायालय तक लड़ा गया।

1980 के फ़रवरी महीने में लक्ष्मण कुमार ने 20 वर्षीया सुधा गोयल से विवाह किया था। वे दिल्ली में एक फ्लैट में रहते थे जहाँ लक्ष्मण के भाई और उनके परिवार भी रह रहे थे। 2 दिसंबर 1980 को सुधा की अस्पताल में मौत हो गई वह जली हुई थी। सुधा के घरवालों ने अदालत में मुकदमा दायर किया। जब निचली अदालत के सामने यह मुकदमा आया तो चार पड़ोसियों को भी गवाह के तौर पर बुलाया गया था। पड़ोसियों ने अपने बयान में कहा कि 1 दिसंबर की रात को उन्होंने सुधा की चीख सुनी थी और मामला जानने के लिए वे बलपूर्वक लक्ष्मण के घर में घुसे। वहाँ उन्होंने देखा कि सुधा की साड़ी से आग की लपटें उठ रही थीं। उन्होंने सुधा को एक बोरे और कम्बल में लपेटकर आग बुझाई सुधा ने उन्हें बताया कि उसकी सास शंकुतला ने उसके ऊपर मिट्टी का तेल डाला था और लक्ष्मण कुमार ने आग लगाई थी। मुकदमे के दौरान सुधा के परिवार वालों और एक पड़ोसी ने कहा

कर्नाटक उच्च न्यायालय

© NCERT not to be republished

कि सुधा के ससुराल वाले उसके साथ बहुत ज़्यादा मारपीट करते थे। उनकी माँग थी कि पहले बच्चे के पैदा होने पर उन्हें एक बड़ी रकम, एक स्कूटर और एक फ्रिज दिया जाए। अपने बचाव में लक्ष्मण और उसकी माँ ने कहा कि सुधा दूध गरम कर रही थी कि तभी उसकी साड़ी में आग लग गई इन सभी बयानों और साक्ष्यों के आधार पर निचली अदालत ने लक्ष्मण, उसकी माँ शकुंतला और सुधा के जेठ सुभाष चन्द्र को दोषी करार दिया और तीनों को मौत की सज़ा सुनाई।

1983 के नवंबर महीने में तीनों आरोपियों ने इस फ़ैसले के खिलाफ़ उच्च न्यायालय में अपील दायर कर दी। दोनों तरफ़ के वकीलों के तर्क सुनने के बाद उच्च न्यायालय ने फ़ैसला लिया कि सुधा की मौत एक दुर्घटना थी। वह मिट्टी के तेल से जलने वाले स्टोव से जली थी। अदालत ने लक्ष्मण, शकुंतला और सुभाष चन्द्र, तीनों को बरी कर दिया।

शायद आपको कक्षा 7 की किताब में महिला आंदोलन पर केंद्रित चित्र-निबंध याद होगा। उसमें आपने पढ़ा था कि 1980 के दशक में देश भर के महिला संगठन 'दहेज हत्याओं' के खिलाफ़ आवाज़ उठा रहे थे। उन्हें इस बात पर दुख था कि अदालतें इस तरह की घटनाओं में दोषियों को दंडित नहीं कर पा रही हैं। उच्च न्यायालय के उपरोक्त फ़ैसले ने ऐसी जागरूक महिलाओं को काफ़ी परेशान कर दिया। उन्होंने कई जगह धरने-प्रदर्शन किए और उच्च न्यायालय के फ़ैसले के खिलाफ़ सर्वोच्च न्यायालय में एक और अपील दायर कर दी। यह अपील 'इंडियन फेडरेशन ऑफ़ वीमेन लॉयर्स' नामक संगठन की तरफ़ से दायर की गई थी।

उपरोक्त मामले को पढ़ने के बाद दो वाक्यों में लिखिए कि अपील की व्यवस्था के बारे में आप क्या जानते हैं।

1985 में सर्वोच्च न्यायालय ने लक्ष्मण और उसकी माँ व भाई को बरी करने के फ़ैसले के खिलाफ़ अपील पर सुनवाई शुरू कर दी। वकीलों के तर्क सुनने के बाद सर्वोच्च न्यायालय ने जो फ़ैसला दिया वह उच्च न्यायालय के फ़ैसले से अलग था। सर्वोच्च न्यायालय ने लक्ष्मण और उसकी माँ को तो दोषी पाया, लेकिन सुभाष चन्द्र को आरोपों से बरी कर दिया क्योंकि उसके खिलाफ़ पर्याप्त सबूत नहीं थे। सर्वोच्च न्यायालय ने दोनों आरोपियों को उम्रकैद की सज़ा सुनाई।

अधीनस्थ अदालतों को कई अलग-अलग नामों से संबोधित किया जाता है। उन्हें ट्रायल कोर्ट या ज़िला न्यायालय, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, प्रधान न्यायिक मजिस्ट्रेट, मेट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट, सिविल जज न्यायालय आदि नामों से बुलाया जाता है। यह रायपुर, छत्तीसगढ़ में स्थित ज़िला अदालत का चित्र है।

© NCERT not to be republished

विधि व्यवस्था की विभिन्न शाखाएँ कौन सी हैं?

दहेज हत्या का यह मामला 'समाज के विरुद्ध अपराध' की श्रेणी में आता है। यह आपराधिक/फ़ौजदारी कानून का उल्लंघन है। फ़ौजदारी कानून के अलावा हमारी विधि व्यवस्था दीवानी कानून या सिविल लॉ से संबंधित मामलों को भी देखती है। फ़ौजदारी और दीवानी कानून के बीच फ़र्क को समझने के लिए नीचे दी गई तालिका को देखें।

क्र.	फौजदारी कानून	दीवानी कानून
1.	ये ऐसे व्यवहार या क्रियाओं से संबंधित हैं जिन्हें कानून में अपराध माना गया है। उदाहरण के लिए चोरी, दहेज के लिए औरत को तंग करना, हत्या आदि।	इसका संबंध व्यक्ति विशेष के अधिकारों के उल्लंघन या अवहेलना से होता है। उदाहरण के लिए ज़मीन की बिक्री, चीज़ों की खरीदारी, किराया, तलाक आदि से संबंधित विवाद।
2.	इसमें सबसे पहले आमतौर पर प्रथम सूचना रिपोर्ट/प्राथमिकी (एफ.आई.आर.) दर्ज कराई जाती है। इसके बाद पुलिस अपराध की जाँच करती है और अदालत में केस फाइल करती है।	प्रभावित पक्ष की ओर से न्यायालय में एक याचिका दायर की जाती है। अगर मामला किराये से संबंधित है तो मकान मालिक या किरायेदार मुकदमा दायर कर सकता है।
3.	अगर व्यक्ति दोषी पाया जाता है तो उसे जेल भेजा जा सकता है और उस पर जुर्माना भी किया जा सकता है।	अदालत राहत की व्यवस्था करती है। उदाहरण के लिए अगर मकान मालिक और किरायेदार के बीच विवाद है तो अदालत यह आदेश दे सकती है कि किरायेदार मकान को खाली करे और बकाया किराया चुकाए।

फ़ौजदारी और दीवानी कानून के बारे में आप जो समझते हैं उसके आधार पर इस तालिका को भरें–

उल्लंघन का विवरण	कानून की शाखा	अपनाई जाने वाली प्रक्रिया
कुछ लड़के स्कूल जाते वक्त लड़कियों को हर रोज़ परेशान करते हैं।		
एक किरायेदार को मकान खाली करने के लिए मजबूर किया जा रहा है और वह मकान मालिक के खिलाफ़ अदालत में मुकदमा दायर कर देता है।		

© NCERT not to be republished

क्या हर व्यक्ति अदालत की शरण में जा सकता है?

सिद्धांतत: भारत के सभी नागरिक देश के न्यायालयों की शरण में जा सकते हैं। इसका अर्थ यह है कि प्रत्येक नागरिक को अदालत के माध्यम से न्याय माँगने का अधिकार है। जैसा कि आपने पीछे पढ़ा है, न्यायालय हमारे मौलिक अधिकारों की रक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अगर किसी नागरिक को ऐसा लगता है कि उसके मौलिक अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है तो वह न्याय के लिए अदालत में जा सकता है। अदालत की सेवाएँ सभी के लिए उपलब्ध हैं, लेकिन वास्तव में गरीबों के लिए अदालत में जाना काफी मुश्किल साबित होता है। कानूनी प्रक्रिया में न केवल काफ़ी पैसा और कागज़ी कार्यवाही की ज़रूरत पड़ती है, बल्कि उसमें समय भी बहुत लगता है। अगर कोई गरीब आदमी पढ़ना-लिखना नहीं जानता और उसका पूरा परिवार दिहाड़ी मज़दूरी से चलता है तो अदालत में जाने और इंसाफ़ पाने की उम्मीद उसके लिए बहुत मुश्किल होती है।

इसी बात को ध्यान में रखते हुए 1980 के दशक में सर्वोच्च न्यायालय ने जनहित याचिका (पी.आई.एल.) की व्यवस्था विकसित की थी। इस तरह सर्वोच्च न्यायालय ने न्याय तक ज़्यादा से ज़्यादा लोगों की पहुँच स्थापित करने के लिए प्रयास किया है। न्यायालय ने किसी भी व्यक्ति या संस्था को ऐसे लोगों की ओर से जनहित याचिका दायर करने का अधिकार दिया है जिनके अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है। यह याचिका उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में दायर की जा सकती है। न्यायालय ने कानूनी प्रक्रिया को बेहद सरल बना दिया है। अब सर्वोच्च न्यायालय या उच्च न्यायालय के नाम भेजे गए पत्र या तार (टेलीग्राम) को भी जनहित याचिका माना जा सकता है। शुरुआती सालों में जनहित याचिका के माध्यम से बहुत सारे मुद्दों पर लोगों को न्याय दिलाया गया था। बंधुआ मज़दूरों को अमानवीय श्रम से मुक्ति दिलाने और बिहार में सज़ा काटने के बाद भी रिहा नहीं किए गए कैदियों को रिहा करवाने के लिए जनहित याचिका का ही इस्तेमाल किया गया था।

क्या आप जानते हैं कि सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त स्कूलों में बच्चों को दोपहर का जो भोजन (मिड-डे मील) दिया जाता है उसकी व्यवस्था भी एक जनहित याचिका के फलस्वरूप ही हुई थी। दाईं ओर दिए गए चित्रों को देखें और नीचे दिए गए विवरण को पढ़ें।

1

2

3

4

चित्र 1 : वर्ष 2001 में राजस्थान और उड़ीसा में पड़े सूखे की वजह से लाखों लोगों के सामने भोजन का भारी अभाव पैदा हो गया था।

चित्र 2 : सरकारी गोदाम अनाज से भरे पड़े थे। बहुत सारा गेहूँ चूहों की भेंट चढ़ गया था।

चित्र 3 : इस स्थिति को देखते हुए पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज (पी.यू.सी.एल.) नामक एक संगठन ने सर्वोच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की। याचिका में कहा गया था कि संविधान के अनुच्छेद 21 में दिए गए जीवन के मौलिक अधिकारों में भोजन का अधिकार भी शामिल है। राज्य की इस दलील को भी गलत साबित कर दिया गया कि उसके पास संसाधन नहीं हैं। इसका आधार यह था कि सरकारी गोदाम अनाज से भरे हुए थे। तब सर्वोच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि सबको भोजन उपलब्ध कराना राज्य का दायित्व है।

चित्र 4 : लिहाज़ा सर्वोच्च न्यायालय ने सरकार को आदेश दिया कि वह नए रोज़गार पैदा करे, राशन की सरकारी दुकानों के ज़रिए सस्ती दर पर भोजन उपलब्ध कराए और बच्चों को स्कूल में दोपहर का भोजन दिया जाए। न्यायालय ने सरकारी योजनाओं के क्रियान्वयन के बारे में रिपोर्ट करने के लिए दो खाद्य आयुक्तों को भी नियुक्त किया।

© NCERT not to be republished

आम आदमी के लिए अदालत तक पहुँचना ही न्याय तक पहुँचना होता है। अदालतें नागरिकों के मौलिक अधिकारों की व्याख्या में एक अहम भूमिका निभाती हैं। जैसा कि आपने उपरोक्त उदाहरण में देखा है, अदालत ने ही संविधान के अनुच्छेद 21 की व्याख्या करने के बाद यह कहा था कि जीवन के अधिकार में भोजन का अधिकार भी शामिल होता है। इसीलिए अदालत ने राज्य को आदेश दिया कि वह दोपहर के भोजन की योजना (मिड-डे मील) सहित सभी लोगों को भोजन मुहैया कराने के लिए आवश्यक कदम उठाए।

लेकिन अदालत के कुछ फ़ैसले ऐसे भी रहे हैं जिन्हें लोग आम आदमी के लिए नुकसानदेह मानते हैं। उदाहरण के लिए, गरीबों के आवास अधिकार जैसे मुद्दों पर काम करने वाले कार्यकर्ताओं का मानना है कि बस्तियों/झुग्गी-झोंपड़ियों को बेदखल करने के बारे में अदालत द्वारा दिए गए हाल के फ़ैसले पुराने फ़ैसलों के विरुद्ध हैं। हाल के फ़ैसलों में झुग्गी वासियों को शहर में घुसपैठियों की तरह देखा जा रहा है

ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम के मुकदमे में न्यायालय ने एक महत्त्वपूर्ण फ़ैसला दिया। इस फ़ैसले में अदालत ने आजीविका के अधिकार को जीवन के अधिकार का हिस्सा बताया। नीचे इस फ़ैसले के कुछ अंश दिए गए हैं। इन्हें पढ़ने पर पता चलता है कि न्यायाधीशों ने जीवन के अधिकार को आजीविका के अधिकार से किस तरह जोड़कर देखा।

अनुच्छेद 21 द्वारा दिए गए जीवन के अधिकार का दायरा बहुत व्यापक है। 'जीवन' का मतलब केवल जैविक अस्तित्व बनाए रखने से कहीं ज़्यादा होता है। इसका मतलब केवल यह नहीं है कि कानून के द्वारा तय की गई प्रक्रिया जैसे मृत्युदंड देने और उसे लागू करने के अलावा और किसी तरीके से किसी की जान नहीं ली जा सकती। जीवन के अधिकार का यह एक आयाम है। इस अधिकार का इतना ही महत्त्वपूर्ण पहलू आजीविका का अधिकार भी है क्योंकि कोई भी व्यक्ति जीने के साधनों यानी आजीविका के बिना जीवित नहीं रह सकता।

किसी व्यक्ति को पटरी या झुग्गी-बस्ती से उजाड़ देने पर उसके आजीविका के साधन फौरन नष्ट हो जाते हैं। यह एक ऐसी बात है जिसे हर मामले में साबित करने की ज़रूरत नहीं है। प्रस्तुत मामले में आनुभविक साक्ष्यों से यह सिद्ध हो जाता है कि याचिकाकर्ता झुग्गियों और पटरियों पर रहते हैं क्योंकि वे शहर में छोटे-मोटे काम-धंधों में लगे होते हैं और उनके पास रहने की कोई और जगह नहीं होती। वे अपने काम करने की जगह के आसपास किसी पटरी पर या झुग्गियों में रहने लगते हैं। इसलिए अगर उन्हें पटरी या झुग्गियों से हटा दिया जाए तो उनका रोज़गार ही खत्म हो जाएगा। इसका निष्कर्ष यह निकलता है कि याचिकाकर्ता को उजाड़ने से वे अपनी आजीविका से हाथ धो बैठेंगे और इस प्रकार जीवन से भी वंचित हो जाएँगे।

2015-16

जबकि पहले वाले फ़ैसलों (जैसे 1985 में ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम के मुकदमे में दिया गया फ़ैसला) में झुग्गी वासियों की आजीविका बचाने का प्रयास किया जा रहा था।

न्याय तक आम लोगों की पहुँच को प्रभावित करने वाला एक मुद्दा यह है कि मुकदमे की सुनवाई में अदालतें कई साल लगा देती हैं। इसी देरी को ध्यान में रखते हुए अकसर यह कहा जाता है कि 'इंसाफ में देरी यानी इंसाफ़ का क़त्ल।'

इस चित्र में 22 मई 1987 को मारे गए हाशिमपुरा के 43 मुसलमानों के कुछ परिजन दिखाई दे रहे हैं। ये परिवार पिछले 20 साल से न्याय के लिए संघर्ष कर रहे हैं। मुकदमा शुरू होने में जो इतना विलंब हुआ, उसके कारण सितंबर 2002 में सर्वोच्च न्यायालय ने यह मामला उत्तर प्रदेश से दिल्ली स्थानांतरित कर दिया था। यह मुकदमा अभी भी जारी है। इसमें प्रोविंशियल आर्म्ड काँस्टेब्युलरी (पी.ए.सी.) के 19 लोगों पर हत्या और अन्य आपराधिक मामलों के आरोप में मुकदमे चलाए जा रहे हैं। इस मुकदमे में 2007 तक केवल तीन गवाहों के बयान दर्ज किए गए थे। (24 मई 2007 को प्रेस क्लब, लखनऊ में लिया गया फोटो।)

26 नवंबर 2007 को भारत के मुख्य न्यायाधीश के.जी. बालकृष्णन ने एक भाषण में कहा था कि "भारतीय न्यायपालिका में 26 न्यायीधीशों से लैस एक सर्वोच्च न्यायालय, 725 स्वीकार्य पदों वाले 21 उच्च न्यायालय (जिनमें 1 मार्च 2007 को केवल 597 न्यायाधीश थे) और 14,477 अधीनस्थ न्यायालय/न्यायाधीश (31 दिसंबर 2006 को उनकी वास्तविक संख्या 11,767 थी) हैं।"

भारत में न्यायधीशों की संख्या

क्रम*	न्यायालय का नाम	स्वीकृत पद	कार्यरत	रिक्त
क	उच्चतम न्यायालय	31	28	3
ख	उच्च न्यायालय	984	635	349
ग	जिला और अधीनस्थ न्यायालय	19,421	15,039	?

** क और ख (1 नवंबर 2014 की स्थिति); ग (31 दिसंबर 2013 की स्थिति)*

जिला और अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्त पदों की संख्या की गणना करें। न्यायाधीशों की कमी से मुकदमा करने वालों को न्याय मिलने में होने वाले प्रभाव की चर्चा करें।

इसके बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि लोकतांत्रिक भारत में न्यायपालिका ने एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। न्यायपालिका ने कार्यपालिका और विधायिका की शक्तियों पर अंकुश लगाया है और नागरिकों के अधिकारों की सुरक्षा की है। संविधान सभा के सदस्यों ने एक ऐसी न्यायपालिका का बिलकुल सही सपना देखा था जो पूरी तरह स्वतंत्र हो। यह हमारे लोकतंत्र का एक बुनियादी पहलू है।

© NCERT not to be republished

अभ्यास

1. आप पढ़ चुके हैं कि 'कानून को कायम रखना और मौलिक अधिकारों को लागू करना' न्यायपालिका का एक मुख्य काम होता है। आपकी राय में इस महत्त्वपूर्ण काम को करने के लिए न्यायपालिका का स्वतंत्र होना क्यों ज़रूरी है?

2. अध्याय 1 में मौलिक अधिकारों की सूची दी गई है। उसे फिर पढ़ें। आपको ऐसा क्यों लगता है कि संवैधानिक उपचार का अधिकार न्यायिक समीक्षा के विचार से जुड़ा हुआ है?

3. नीचे तीनों स्तर के न्यायालय को दर्शाया गया है। प्रत्येक के सामने लिखिए कि उस न्यायालय ने सुधा गोयल के मामले में क्या फ़ैसला दिया था? अपने जवाब को कक्षा के अन्य विद्यार्थियों द्वारा दिए गए जवाबों के साथ मिलाकर देखें।

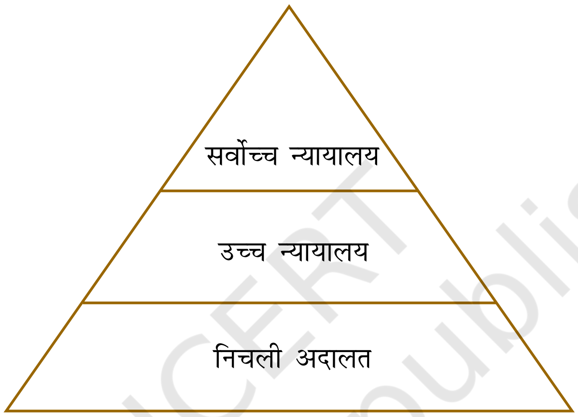

4. सुधा गोयल मामले को ध्यान में रखते हुए नीचे दिए गए बयानों को पढ़िए। जो वक्तव्य सही हैं उन पर सही का निशान लगाइए और जो गलत हैं उनको ठीक कीजिए।

   (क) आरोपी इस मामले को उच्च न्यायालय लेकर गए क्योंकि वे निचली अदालत के फ़ैसले से सहमत नहीं थे।

   (ख) वे सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले के खिलाफ़ उच्च न्यायालय में चले गए।

   (ग) अगर आरोपी सर्वोच्च न्यायालय के फ़ैसले से संतुष्ट नहीं हैं तो दोबारा निचली अदालत में जा सकते हैं।

5. आपको ऐसा क्यों लगता है कि 1980 के दशक में शुरू की गई जनहित याचिका की व्यवस्था सबको इंसाफ दिलाने के लिहाज़ से एक महत्त्वपूर्ण कदम थी?

6. ओल्गा टेलिस बनाम बम्बई नगर निगम मुकदमे में दिए गए फ़ैसले के अंशों को दोबारा पढ़िए। इस फ़ैसले में कहा गया है कि आजीविका का अधिकार जीवन के अधिकार का हिस्सा है। अपने शब्दों में लिखिए कि इस बयान से जजों का क्या मतलब था?

7. 'इंसाफ़ में देरी यानी इंसाफ़ का क़त्ल' इस विषय पर एक कहानी बनाइए।

8. अगले पन्ने पर शब्द संकलन में दिए गए प्रत्येक शब्द से वाक्य बनाइए।

© NCERT not to be republished

9. यह पोस्टर भोजन अधिकार अभियान द्वारा बनाया गया है।

इस पोस्टर को पढ़ कर भोजन के अधिकार के बारे में सरकार के दायित्वों की सूची बनाइए।

इस पोस्टर में कहा गया है कि "भूखे पेट भरे गोदाम! नहीं चलेगा, नहीं चलेगा!!" इस वक्तव्य को पृष्ठ 61 पर भोजन के अधिकार के बारे में दिए गए चित्र निबंध से मिला कर देखिए।

शब्द संकलन

बरी करना– जब अदालत किसी व्यक्ति को उन आरोपों से मुक्त कर देती है जिनके आधार पर उसके खिलाफ़ मुकदमा चलाया गया था तो उसे बरी करना कहा जाता है।

अपील करना– निचली अदालत के फ़ैसले के विरुद्ध जब कोई पक्ष उस पर पुनर्विचार के लिए ऊपरी न्यायालय में जाता है तो इसे अपील करना कहा जाता है।

मुआवज़ा– किसी नुकसान या क्षति की भरपाई के लिए दिए जाने वाले पैसे को मुआवज़ा कहा जाता है।

बेदखली– अभी लोग जिस ज़मीन/मकानों में रह रहे हैं, यदि उन्हें वहाँ से हटा दिया जाता है तो इसे बेदखली कहा जाएगा।

उल्लंघन– किसी कानून को तोड़ने या मौलिक अधिकारों के हनन की क्रिया को उल्लंघन कहा गया है।